आनन्द का स्रोत

संत श्री आशारामजी महाराज

ता

इसलिये

श्री यो

– निवेदन –

रात घनी होती जा रही है और स्वामीजी के मुखारविन्द का वचनामृत–प्रवाह श्रोताओं का हृदय और अधिक आकर्षित करता जा रहा है। वे सुनते ही जा रहे हैं–

※ ...तो तुम कुछ भी करो, मगर पहले अपने आप को जान लो, फिर तुम्हें दुनियाँ का कोई कर्म नहीं बांध सकेगा।

※ ...और इस सबके लिये अपने जीवन को पवित्र बनाना चाहिये।

※ ...ऐसा नहीं करेंगे तो लोग नाराज होंगे। अरे, लोग तो नाराज होंगे, होते रहेंगे, पर तुम्हारा तो सारा जीवन ही तुमसे नाराज हो जायेगा–यह तुम्हें खयाल नहीं आता?

※... कब तक लोगों के कहने में जीते रहोगे? जन्मों–जन्मों से भटकते आ रहे हो।

※ ...छोड़ो इन गुलामियों को, अपनी इन कमजोरियों को! अपने जीवन में वेदान्त लाओ। निर्भयता लाओ। प्रसन्न रहो। इन बाहरी सहारों में सुख मत ढूँढो।

अपने अन्दर देखो, उसीका सहारा लो। बाकी नश्वर सहारों को छोडो। अपने आपको जानो!

भावनगर के प्रवचन में वजीर–पुत्री, सेठ, संत, मछलीमार और राजा की कहानी के ताने-बाने के साथ वेदान्त को कितना सरलतम बनाकर समझाने का स्वामीजी ने प्रयास किया है! रात्रि के दस बजे प्रारंभ हुआ यह प्रवचन रात्रि को तीन बजे पूर्ण हुआ था। जो वहाँ आया वह वहीं मंत्रमुग्ध हो सुनता रहा।

आइये, हम भी इस प्रवचन–प्रवाह में स्वयं उतरें और जहाँ जहाँ अनमोल मोती मिलें उन्हें चुने।

श्री गुरुपूर्णिमा महोत्सव **संकलनकर्ता**
१९७७

ॐ

अपना आचरण वेदान्ती बनाओ

स्वामी श्री ककुराम मंदिर, भावनगर
२५–२–'७७
रात्रि १० बजे

दि० १८ से २५ फेब्रुआरी तक पू. स्वामीजी के अमृतवचनों का धारा–प्रवाह पावन लाभ भावनगर के धर्मपिपासु भक्त लोगों को प्राप्त हो रहा है। लगभग महीने भर पूर्व से ही इधर स्वामीजी का प्रवचन कार्यक्रम यहाँ के उत्साही कार्यकर्ताओं ने तय करा रखा था। आज कार्यक्रम का समापन समारोह है।

कुछ भजन सेवक जयसिंहानी ने अभी–अभी गाए हैं। वातावरण बड़ा ही शांत एवं पवित्र बन चुका है। जितना शामियाना लगा है, वह भक्त लोगों की उपस्थिति में बहुत छोटा पड रहा है। रंगबिरंगे विद्युत बल्बों के प्रकाश से सारा स्थान जगमगा रहा है। हजारों श्रोताओं की नजर एवं कान सामने ही अद्भुत रीति से सजाए हुए मंच पर बिराजमान् पूज्य स्वामीजी की ओर लगे हुए हैं।

स्वामीजी—

पाप का फल दुःख है और पुण्य का फल सुख है। व्यक्ति सुख चाहता है, मगर सुख भी आने जाने वाला है, अतः वह भी नश्वर है; इसलिये

उससे भी वह तृप्त नहीं होता। सुख दुःख दोनों ही कर्म के अधीन हैं। हर कर्म दोषपूर्ण है। जब तक व्यक्ति सकाम कर्म करेगा, तब तक उसे फल भी मिलेगा। भले वह अच्छा हो अथवा बुरा जन्म–मरण के चक्कर से तो नहीं छुड़ा सकेगा।

व्यक्ति शाश्वत् सुख चाहता है और वह तो आत्मपद की स्थिति में ही संभव है। जब तक स्थिति नहीं हई है, तब तक वह समझपूर्वक निर्लेप होकर कर्म करके अपना जीवन सरल एवं राग–द्वेष रहित बनाए रखने का प्रयास करे। धीरे–धीरे अंतःकरण शुद्ध होगा और वह आनन्द की तरफ बढ़ेगा।

राजा भोज के जमाने की बात है। उसका एक वजीर था। उसे राजा ने ४ प्रश्न पूछे–

१. है–है–है।

२. है–है–नहीं।

३. नहीं–नहीं–है।

४. नहीं–नहीं–नहीं।

प्रश्न बड़े विचित्र थे। किसी शास्त्र में उसका हवाला नहीं मिलता था। अब वजीर बड़ा परेशान! उसने मुहलत मांगी उत्तर ढूँढने की। उसका उदास चेहरा देखा उसकी लड़की ने। वह समझ गई कि कोई समस्या पिताजी को अन्दर ही अन्दर परेशान किये हुए है।

लड़की रोज सबेरे ध्यान करती थी। ध्यान करने से बुद्धि तीक्ष्ण होती है। पवित्र भावों में वृद्धि होती है और आत्मोत्थान होता है।

उसने पिताजी को उसकी उदासी का कारण पूछा। पिताजी ने देखा कि इस नादान को क्या बताएँ। मगर हाँ–ना करके अंत में बताना ही पड़ा। लड़की ने ध्यान किया तो उसे कुछ प्रेरणा हुई।

वह निर्भय थी। उसने पिताजी की हिम्मत बढ़ाई। पुण्य का फल है निर्भयता। पाप का फल है भय। ध्यान करने से निर्भयता आती है। आत्मा में स्थित व्यक्ति निर्भय होता है। आत्मभाव में स्थित व्यक्ति कुछ भी करे उसे कोई पाप नहीं है। भले वह हजारों को काट देवे, उसे कोई लेप नहीं। यही बात श्री कृष्ण ने अर्जुन को गीता में बताई है।

तो तुम कुछ भी करो, मगर अपने आपको पहले जान लो, फिर तुम्हें दुनिया का कोई कर्म नहीं बांध सकेगा। और **बिना अपने आपको जाने आप कैसे भी पुण्य कर्म कर लें, मगर जन्म-मरण के चक्कर से नहीं छूट सकते। बिना ज्ञान के मुक्ति नहीं होगी।**

और इस सबके लिये अपने जीवन को पवित्र बनाना चाहिये। इसके लिये आहार-विहार शुद्ध होना चाहिये। कुछ लोग घर पर मेहमानों को खुश करने के लिये मांस–दारु का उपयोग करते हैं। कहते हैं– मेहमान हैं, ऐसी खातिरदारी नहीं करेंगे तो वे नाराज हो जाएंगे। अरे वे तो नाराज होंगे, पर तुम्हारा तो सारा जीवन ही तुमसे नाराज हो जायेगा यह तुम्हें ख्याल में नहीं आता? कब तक लोगों के कहने में जीते रहोगे? जन्मों–जन्मों से भटकते आ रहे हो। फिर संतों के आगे आकर हम रोते हैं–क्या करूँ महाराज? बहुत दुःखी हूँ...,और दुःख के कारण हम खुद ही बढ़ाते चले जाते हैं।

मांस–शराब तमोगुणी भोजन है। इसके व्यवहार से भाव अशुद्ध बनते हैं। भावों से ही सारा जीवन का व्यवहार बनता है। हमारा सारा जीवन ही एक खराब तमोगुणी दिशा पकड़ लेता है। फिर हमें सुख की झलक भी दुर्लभ हो जाती है।

मांस मांस सब एक है, हिरनी बकरी गाय।
आँख देख नर खात है, निश्चय नरक में जाय॥

नानक साहब ने भी कहा है :

जो रत्त लगे कपडा जामा होत पलीत ।
सो रत्त पीवे मानखा, ताको कैसे निर्मल चित्त ॥

फिर हम आशा करें कि हमारे घरमें सुख की वर्षा हो! कहाँ से होगी ? हम मांस के व्यवहार से अपना और मेहमान दोनों का ही अकल्याण करते हैं और ऊपर से सोचते हैं, मेहमान की खातिरदारी करते हैं । कैसी विचित्रता है !

शराब से भी कई बिमारियाँ उत्पन्न होती हैं । शराब से मस्तिष्क के ज्ञानतंतु कमजोर हो जाते हैं । स्मरण-शक्ति को गहरा धक्का लगता है । नशे के कारण थोड़ी देर के लिये लगता है सभी चिन्ताएँ खत्म हो गई । मगर सुबह उठने के साथ ही पुनः चिंताओंका भूत उससे भी बड़ा आकर सामने खड़ा नजर आता है । यह सब अपने को ही हम धोखा देते हैं और दुःखी होते हैं ।

बीडी–सिगेरट का नशा भी हमें दुःख की तरफ ही धकेलता है । कहते हैं, तम्बाकू का नशा आनेवाली १० पीढ़ियों तकको अपना बुरा असर देता रहता है ।

फिर भी हम इन नशों के गुलाम बनते रहते हैं । छोड़ो इन गुलामियों को–अपनी इन कमजोरियों को ! अपने जीवन में वेदान्त लाओ । निर्भयता लाओ । प्रसन्न रहो । इन बाहरी सहारों में सुख मत ढूँढो । अपने अन्दर देखो । देखो कि अपना आप हमारा आत्मदेव शाश्वत् सुख का भन्डार हर समय चमक रहा है । उसका सहारा लें । बाकी नश्वर सहारों को छोड़ो । अपने आप को जानो ।

तो वह लड़की अपने जीवन में वेदान्त को जगह दिये हुए थी । उसका जीवन वेदान्ती था । वह ध्यान करती थी । और उससे उसे

प्रेरणा हुई कि उसे क्या करना चाहिये ? कैसे अपने पिता की समस्या को हल करना चाहिये ?

उसने रथ तैयार करवाया और पिताजी को साथ लेकर सुबह ही सुबह घर से निकल पड़ी । थोड़ी ही दूर पिता-पुत्री गये थे कि रास्ते में एक सेठ प्रसन्नवदन किसी आत्मनिष्ठ संत की कुटीर से अपने घर की ओर लौटता हुआ नजर आया ।

लड़की ने पिताजी से पूछा—"यह कौन है पिताजी ?"

वजीर ने कहा–बेटी ! यह नगर सेठ है । बड़ा धर्मात्मा है । इसका जीवन बड़ा सादा एवं निर्दोष है ।

सच्चा भगवान का भक्त मिलना कठिन है । आऽऽआऽऽकरके एक हाथ कान पर और दूसरा हाथ सामने लम्बा करके अपना साढ़े तीन इंच का मुंह फाड कर पूरे गले से स्वर आलापने वाले तो बहुत मिल जाएंगे, मगर सच्चे भगत नहीं मिलते ।

"भगत जगत को ठगत है, भगत को ठगे न कोई ।
एक बार जो भगत ठगे तो अखण्ड यज्ञ फल होई ॥"

सच्चे भगत को माया नहीं पहुँच सकती । ऐसा भगत जगत को ठगता है (जगत में रहते हुए अपने चित्त पर जगत का लेप नहीं लगने देता है)। ऐसे भगत को जो ठग ले यानि उसे अपनी सेवा से प्रसन्न कर ले तो अखंड यज्ञ का फल उसे प्राप्त होता है, अर्थात् अखण्ड आनन्द मिल जाता है—जहाँ कोई क्षय नहीं है ।

तो उस लड़की ने पिताजी से कहलाकर उस नगर सेठ को अपने रथ में बिठा लिया ।

कुछ आगे चले तो एक आलीशान कोठी में से पायलों की रुन–झुन व तबलों की आवाजें आती सुनाई पड़ी ।

बेटी ने पूछा—"पिताजी यह क्या...?"

वजीर बोला "बेटी! यहाँ सेठ का लडका राग रंग और नृत्यगान में मस्त है। वह बहुत विलासी है और क्रोधी है।"

इतने में वह लडका बाहर आता हुआ नजर आया।

लड़कीने कहा, "पिताजी इसे साथ ले चलो।"

वजीर बोला, "क्या करेंगे बेटी? ऐसों का तो मुँह देखना भी पाप हैं।"

मगर लड़कीने कहा, "आप मेरी बात तो मानिये।" वजीर ने जैसे-तैसे उस लड़के को भी भय आदि दिखाकर अपने रथ में बिठा लिया।

और आगे चले तो सबकी नजर एकान्त में एक पेड़ के नीचे ध्यानस्थ बैठे एक महात्मा पर पड़ी। उनके मुख पर तपस्या का तेज झलक रहा था। उसे देखते ही लड़की ने कहा—"पिताजी, इन महात्मा को भी साथ ले लें।"

वजीर बोले—"बेटी तुम नहीं जानती ये संत हैं। ये मर्जी के मालिक होते हैं। ये नहीं चलेंगे।"

लड़की बोली— "मगर पिताजी! कैसे भी हो इनको साथ ले लीजिये।"

लड़की का हठ देखकर वजीर उन महात्मा के पास गया और नम्रता से अपना सिर झुकाकर प्रणाम किया।

नम्रता से क्या नहीं हो सकता? नम्रता बहुत बड़ा गुण है। नम्रता से शत्रु का हृदय भी जीता जा सकता है। मगर हम नम्र नहीं बनना जानते। अपना अहंकार नहीं छोडना चाहते। हर समय

अपनी अकड़ बनाए रखते हैं कि मैं कुछ हूँ। इसी कारण हम जो हैं उससे अधिक आगे नहीं बढ़ पाते। हम अधिक गुण नहीं ले पाते।

कुछ लोग सन्तों के आगे भी नहीं झुकना चाहते। झुकते भी हैं तो शरीर से झुकते हैं, मगर अन्दर का अहंकार यों का यों सीधा खड़ा रहता है। यदि कोई अन्दर से भी झुक जाय–पूर्णतया, अपने आपको सच्चे सन्त को समर्पित कर दें, मिट जायें तो उसे कुछ भी करना बाकी नहीं रहता। उसका आनन्द का खजाना खुल जाता है।

मगर हम झुकते नहीं है। हममें सच्ची नम्रता जगती नहीं है। यदि जगती भी है तो किसी न किसी संसारी तुच्छ स्वार्थ के लिये, बस! उससे आगे नहीं।

तो वजीर ने उन महात्मा से झुककर नम्रतापूर्वक निवेदन किया—

'महाराज! आप जैसे महापुरुषों के पुण्य से ही इस पृथ्वी पर धन्य-धान्य और रस टिका है। आपके हर श्वास से प्राणीमात्र का कल्याण हो रहा है। जब हमारे जैसे संसारी–व्यवहारियों को कुछ भी रास्ता नहीं सूझता और परेशान हो जाते हैं, तब आप जैसे महा-पुरुषों की छाया ही वट वृक्ष की तरह हमारे हृदय में सुख शांति का संचार करती है।...आपको तो महाराज कहीं आना जाना है नहीं। ऐसी जगह कहीं नहीं है, जहाँ आप न हो। आप ब्रह्म स्वरुप हैं।...महाराज एक कृपा करें। आज आप हमारे साथ थोड़े समय के लिये राजमहल पधारें। रथ आपके लिये तैयार खडा हैं। इतनी हमारी प्रार्थना आप स्वीकार करें... ।"

नम्रता में बड़ी ताकत है। जहाँ डंडा काम नहीं देता, जहाँ पैसा काम नहीं देता, जहाँ कायदा लाचार पड़ जाता है वहाँ नम्रता काम दे जाती है। बडे मीठे शब्द वजीर के नम्रता से बोले गए काम दे गए।

वाणी ऐसी बोलिये, मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय॥

अपनी वाणी में ऐसी मिठास हो कि दूसरों का हृदय भी शीतल हो और हमारा हृदय भी शीतल हो। कुछ लोग बोलना नहीं जानते। अच्छी से अच्छी बात को भी ऐसी वाणी में बोल जाते हैं कि बनता हुआ काम भी उनका बिगड़ जाता है। इसलिये क्या बोलना, कैसा बोलना, कितना बोलना, किस वक्त बोलना यह भी एक कला है।

तो नम्रता और वाणी की मिठास ने वर्जीर को सफलता दी और महात्मा भी मंथर गति से चलकर रथ में आ विराजमान हुए।

सबको लिये हुए रथ और आगे चल पड़ा। जब नगर की सीमा समाप्त होने लगी तो सबने देखा कि एक तालाब के किनारे एक मच्छीमार बैठा मछलियाँ पकड़ रहा है।

कहाँ तो सुबह की ताजी शुद्ध हवा, अरुण सूर्य की ताजी धूप, स्वास्थ्य के लिये परम पवित्र वातावरण जिसमें व्यक्ति के तन मन दोनों ही शुद्ध हो सकते हैं और चाहें तो ध्यान करके लोग भगवान से डोर लगा सकते हैं; और कहाँ यह मछलीमार मछलियाँ मार कर पाप अर्जन कर रहा है!

यह भी कोई उल्टे काम करने वाला भोजू ही होगा।

एक था भोजू। वह कुछ उल्टे ही काम किया करता था। लोग उसे भोजू ही कहा करते थे। ध्यान से सुनना हो! यह गप्प हो अथवा सच हो, इसमें गहरा अर्थ छिपा है।

तो भोजू ने अपने ४ मित्रों को साथ लेकर नशा किया और

घर की ओर लौट रहे थे तो रास्ते में प्यास लगी। रास्ते में कुआ भी दिखाई पड़ गया। भोजू ने अपने मित्रों को कहा–

"यारों! किधर देख रहे हो? यह रहा कुआ तो! आओ, जरा पानी पी लें।"

पाँचों मित्र पहुँचे कुए के पास। मगर भोजू तो भोजू ही था। उसने ऊपर देखा, आकाश में सूरज तप रहा है। धरती पर देखा, नीचे पैर जल रहे हैं। कुछ सोचा और बोला—

यारों! क्या देख रहे हो? कुछ पुरुषार्थ करना चाहिये। कुआ कितनी देर से धूप में पड़ा है। इसका पानी तो बहुत गर्म होगा। हम पाँच हैं। सभी लगाओ जोर और इसको धकेल कर छाया में कर लो। फिर इसका पानी थोडा ठंडा हो जायेगा, तब पियेंगे।

(लोग सुनते–सुनते हंस पडे हैं।)

अब, भोजू तो भोजू ही था। उसके यार फिर उससे कम क्यों होंगे! पाँचों ने अपना सिर टिका दिया कुए की दीवाल से और लगाया जोर।

मगर अन्दर के नशे ने भी जोर किया और पाँचों वहीं ढेरी हो गए।

चार–पाँच घंटे बीते! कुए पर छाया आ गई! इतने में भोजू का नशा जरा हल्का पड़ा। उसने आँखे खोली तो देखा कुआ छाया में...! तुरन्त जोर से बोला "यारों, बस करो बस! ज्यादा जोर मत लगाना। कुआ छाया में आ गया है। कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे ज्यादा जोर लगाने से पुनः धूप में चला जाय।"

(सभी ठहाका मार कर हँस पड़े हैं। हँसी काफी देर तक गूंजती रहती है।)

स्वामीजी :

हमें हँसी आ रही है भोजूकी कारस्तानी पर । मगर यह न भूलें कि हम भी भोजू बने हुए जीते हैं । भोजू सोचता नशे में कि हमारे जोर लगाने से कुआ छाया में आता है और हम भी एक तरह के नशे से मोहित हुए जीते हैं । हम भी यही सोचते हैं कि यह मिले तो सुख होगा, वह मिले तो सुख होगा । ऐसा करें तो, वैसा करें तो, सुन्दर पत्नी मिले तो, बेटा मिलें तो, परमोशन मिले तो, एक की दो दुकानें बनें तो, झोंपडी का बंगला बने तो, हजार का लाख बने तो, क्लार्क से कलेक्टर बने तो, मामलतदार से मिनिष्टर बने तो–यानि कुछ न कुछ बनें तो सुख होगा । उसी सुख की आस में दौड़ते रहते हैं– जीवनभर । कभी यह दौड़, यह नश्वर सुखों के पीछे की दौड़ समाप्त नहीं होती । जन्म–जन्मांतरों से यही दौड़ चल रही है । बचपन से बुढ़ापे तक उसी दौड में हम लगे हुए हैं और कभी कोई संत सचेत करते हैं कि 'अरे! जरा सुनो तो ! तुम कहाँ भागे जा रहे हो ? हम तुमको तुम्हारी मंजिल बता देते हैं। जरा सत्संग करो..., तो हम रुकते नहीं और कहते हैं, "अभी नहीं । अभी तो हम जल्दी में है । अभी हमें सत्संग सुनने की फ़ुर्सत नहीं है । अभी तो यह काम है, वह काम है । बेटों को काम पर लगा लें, दूसरों का हित कर लें...। "

अरे, किसका हित करोगे ? तुम अपने आपको ही नहीं जानते और दूसरों का हित करने चले हो ! जरा रुको, ठंडे दिमाग से सोचो कि हम दुनियाँ में क्यों आये हैं ? क्या करने के लिये आए हैं और क्या करते जा रहे हैं ? जो कुछ संग्रह करते जा रहे हैं, क्या वह हमेशा रहने वाला है ? क्या यह यौवन, यह धनसम्पदा, ये सम्बंधी, ये मित्र, ये कार–बंगले, यह प्रतिष्ठा सदैव बनी रहने वाली है ? फिर क्यों न इनके होते हुए उस शाश्वत् को, उस अपने आनन्द के भण्ड़ार अपने चैतन स्वरूप आत्मदेव को जान लें, जिसको जानने के बाद सारी

दुःखपूर्ण दौड़ें ही समाप्त हो जाती हैं । अन्यथा जैसे आये थे, वैसे ही रह जाएंगे । फिर किसी मां के गर्भ में उल्टा लटकना पड़ेगा । इसलिये संत कहते हैं–चेतो !

"अरे गाफिल न समझा था, मिला था तन रतन तुझको।
मिलाया खाक में तूने, ए सजन, क्या कहूँ तुझको ।
शाही और गदाई क्या, कफन किस्मत में आखिर ।
मिले या ना खबर पुख्ता ए वतन और कफन तुझको ।"

इसलिये गाफिल मत बनो । पुरुषार्थ करना है तो इन नश्वर वस्तुओं के लिये क्या करना ? ये तो प्रारब्ध के अनुसार मिलने ही वाली है। पुरुषार्थ करना है तो शाश्वत के लिये करो, अन्यथा हम भी भोजू ही रह जाएंगे । भोजू सोचता है कि हम कुए को छाया में लाए जब कि छाया अपने आप ही कुए पर आई थी। और ऐसे ही हम सोचते हैं कि हमने ये किया, वह किया, यह बनाया, वह बनाया जब कि समय के साथ ये सब तो मिलेंगे ही और नाश भी हो जायेंगे। तो भोजू की तरह मोह रूपी नशे में वही मत करते जाओ कि बाद में पछताना पड़े । वह करो कि जिसके बाद सारी दौड़ समाप्त हो जाय। अपने मोह और आसक्ति के नशे से जाग जाओ।

तो वह मच्छीमार भी सुबह ही सुबह वही कर रहा था जैसे भोजू कभी कभी किया करता था। लड़की ने उसे देखा और पिताजी को कहा कि इसको भी साथ ले चलो, इसकी भी जरुरत है ।

मच्छीमार को भी साथ ले लिया गया।

सभी राजभवन में पहुँचे। दरबार भरा हुआ था। अब इनके पहुँचते ही राजसभा धर्मसभा बन गई, क्योंकि इनके साथ संत भी थे। आप देखें कि अभी आप कितने शांत बने हुए सुन रहे हैं । कितने

सात्विक वातावरण में हम सब आध्यात्मिक लाभ ले रहे हैं। और इसी मंच पर कोई नट नटिनयाँ अथवा कोई ताकड़धिन्ना वाले लोग आ जाए तो... । तो स्टेज का व सभा का रंग ही बदल जाता ।

(हंसी)

जहा संत हैं वहाँ प्रेममय वातावरण बन जाता है । मगर हम सच्चे संतों को पहचान नहीं पाते । आजकल बहुधा ढोंगी संत अधिक पूजे जाते हैं, क्योंकि वे पुजवाने का ढंग जानते हैं । सच्चे संत मान–बड़ाई से दूर रहते हैं, दुर्लभ होते है । कई बार तो पागल और भिखमंगों के वेश में होते हैं । सच्चे संत हमारे पास से भी निकल जायं, कई बार निकलते भी होंगे, मगर हम नहीं पहचान पाते, क्यों कि वे स्वयं को छुपाए रखना चाहते हैं और हमारे पास उनको पहचानने की दृष्टि नहीं होती, क्योंकि पिछले हमारे पुण्य कर्म प्रबल नहीं होते और सांसारिक वासनाओं की लम्बी लिस्ट से हम हमारे मन को सदैव लादे हुए फिरते हैं ।

और सच्चे संत हमारे सामने भी आजाय तो भी हम उन्हें नहीं देख पाते ! हम उनके कपड़े देख पाते हैं, हम उनकी देह देख पाते हैं, हम उनकी दाढ़ी पाते हैं उन्हें नहीं देख पाते, क्योंकि हम हर चीज को चमड़े की आँख से ही देखने के अभ्यस्त हैं ! और चमड़े की आँख की शक्ति सीमित हैं ! वह संत का संतत्व नहीं देख सकती !

राजा जनक जैसे महाराजा एवं उस के दरबार के धुरन्धर पंडित भी अष्टावक्र जैसे ज्ञानी महापुरुष को देखने मे धोखा खा गए थे ! इसलिये ज्योंही अष्टावक्र दरबार मे आए तो सब उनके आठ स्थानों से वक्र अंगों को देखकर हँस पड़े ! तो अष्टावक्र बोले–

" ऐ जनक ! क्या चमारों की सभा भरकर बैठा हैं ! "

सभी चौंक गए अपने को चमार सम्बोधन करते हुए सुनकर ! वास्तव मे बात ठीक ही थी । सबने अष्टवक्र के चाम को–उनके शरीर को देखा था। उनका ज्ञान तत्व कोई नहीं देख पाया था ।

तो ज्ञान देखना हो तो ज्ञान की आँख चाहिये। अन्तर्दृष्टि चाहिये । साधक देखना है तो साधक बनकर देखो। संत को सही अर्थों में देखना है तो हृदय संत का बनाना पड़ेगा ! नहीं तो कोई लाभ नहीं ले पाओगे । उनसे पैसे, धन, बंगला, पुत्र आदि मांग लिये और मिल गये तो मत समझना कि हमने बहुत कुछ पा लिया ! अरे, असली माल तो अन्दर है ! ये तो गुड का बारदाना है, टाट है ! गुड़ तो अन्दर है !

जिसने संत को देख लिया उसने समझो सब कुछ देख लिया। उसे कुछ भी देखना बाकी नहीं रहा। ईसीलिये नानक साहब ने कहा है.

' संत का दर्शन बडभागी पावे । '

तो राजसभा धर्मसभा बन गई ! वजीर–पुत्री ने राजा से निवेदन किया कि–महाराज ! यदि आज्ञा करें तो आपके प्रश्नों का उत्तर मेरे पिताजी की बजाय मैं ही दे दूँ ! और प्रत्यक्ष में प्रमाण सहित दूँ, सैद्धांतिक नहीं ।

राजा ने प्रसन्नतापूर्वक उस बाला को अनुमति दी। सभी की आँखें एवं कान वजीर–पुत्री की ओर लग गए ।

वजीर–पुत्री ने सबसे पहले सेठ की ओर इशारा किया और बोली—

" महाराज ! यह सेठ आप के प्रथम प्रश्न का जवाब है। आप पूछेंगे–कैसे, तो सुनो ! इन्होंने अगले जन्मों में पुण्य कर्म किये हैं इस लिये इस समय वर्तमान मे सेठ हैं। करोडों की सम्पत्ति के मालिक

हैं। अभी ये केवल मौज नहीं करते, दान पुण्य आदि भी करते हैं, भगवद् चिन्तन अभी भी इनका चालू है। इस लिये वर्तमान भी इनका सुखपूर्ण है व इस कारण भविष्य भी उज्ज्वल है; यानि भूत, वर्तमान और भविष्य में तीनों कालों में इनका सौभाग्य—है है है।"

"अब इस लडके की ओर देखें। यह आपके दूसरे प्रश्न का उत्तर है!" लड़की ने सेठ पुत्र की ओर अंगुली निर्देश करते हुए कहा–"इसने अगले जन्मों में पुण्य कर्म किये हैं, इसलिये आज यह ऐश–आराम कर रहा है, गुलछर्रे उड़ा रहा है। मगर शुभ कर्म नहीं कर रहा इसलिए भविष्य इसका उज्जवल नहीं! यानि यह—है है नहीं। भूतकाल सुन्दर रहा है, वर्तमानकाल में भी सुख के साधन हैं और भविष्य में नहीं।"

अब वजीर पुत्री ने बड़े आदर से उन महात्मा की ओर निहारा और बोली—

"अब आप पूज्य संत की ओर निहारिये। इनके पहले के कर्म सुख सुविधा देने वाले नहीं हैं, इसलिये अभी भी इनको सुख के साधन उपलब्ध नहीं; लेकिन अभी ये परम तत्व की ओर अग्रसर हो रहे हैं इसलिये आईन्दा (भविष्य) इनका बड़ा आकर्षक व उज्ज्वल है। अर्थात ये तीसरे प्रश्न के उत्तर के प्रतीक हैं, यानि–नहीं नहीं है"

राजा सहित सभी दरबारी बड़े ध्यान से प्रमाण सहित वजीर पुत्री के समझपूर्वक दिये गये उत्तरों को सुन रहे थे।

अब वजीर पुत्री ने चौथे–मच्छीमार की ओर इशारा करते हुए कहा–"महाराज! यह आप के चौथे प्रश्न का ज्वलंत उत्तर है। इसने पूर्व जन्म में कोई पुण्य कर्म नहीं किया, इसलिये आज यह निर्धन है! अभी

भी कोई पुण्य कर्म नहीं करता। खाली मछली मारता है। क्या करना चाहिये और क्या नहीं करना चाहिये इसकी भी यह कोई चिन्ता नहीं करता। अर्थात इसने पहले कुछ अच्छा किया नहीं, अभी भी कुछ अच्छा करता नहीं अतः सुख पाता नहीं, इसलिये भविष्य भी इसका कुछ उज्ज्वल नहीं। यानि–नहीं नहीं नहीं।

राजा ने वजीर पुत्री के बुद्धि कौशल्य की बडी सराहना की। मगर वह जानती थी कि यह सब चमत्कार उसका नहीं बल्कि उसके ध्यान आदि सात्विक कर्मों से युक्त वेदान्ती जीवन का है।

तो हम विचार करें कि किस प्रकार हमारा जीवन सफल हो। हम क्या करें कि हमारा जीवन सरल बने, निर्दोष बने। उसमे सत्संग को महत्वपूर्ण स्थान हो। हम सात्विक कर्म करें।

सत्संग से हमारी बुद्धि निर्मल होती है। क्या करना और क्या नहीं करना चाहिये यह समझ हम में पैदा होती है। शाश्वत् क्या है और नाशवान् क्या है इस की समझ पैदा होती है। सुख क्या है और आनंद क्या है इसका भेद समझमें आता है। यह जीवन किसलिये मिला है और इसको खर्च करने में गलती कहाँ हो रही है यह समझ में आता है। और यह समझ में आना बहुत मूल्यवान् है। यह समझ में आ गया तो हमारी दौड नश्वर की बजाय शाश्वत् की ओर मुड जायेगी। जहाँ से सच्चा आनन्द आता है उस हमारे अपने ही आत्मदेव को जानने की ओर हमारी वृत्ति बन जायेगी। हम अपनी सारी शक्तियाँ उसी ओर लगा देंगे। हमे संसार की नश्वरता समझ में आने लगेगी और शाश्वत का आनन्द मिलना प्रारंभ हो जायेगा। फिर हमें दुनियाँ के दुःख परेशान नहीं कर सकेंगे, दुनिया के सुख भी चलायमान् नहीं कर सकेंगे। हम सदैव आनन्द में रहेंगे। फिर आनन्द के लिये बाहर के किसी साधन के सहारे की आवश्यकता नहीं रहेगी। हम देह–भाव से, जीव–भाव से, सुख–दुःख से ऊपर उठकर जल में कमलवत् इस संसार में व्यवहार कर

सकेंगे। संसार में रहेंगे, मगर संसार के सुख–दुःख हमें प्रभावित नहीं कर सकेंगे। यह सब तब होगा जब हम अपने आत्मदेव को जान लेंगे। जब हम आत्म–साक्षात्कार कर लेंगे। और यह सत्संग से, ध्यान करने से, तत्वनिष्ठ महापुरुषों के सान्निध्य और आज्ञा–निर्देश मे चलने से होता है।

संसार के सभी दुःखों से छूटने का यही एक उपाय है। अपने आप को जानो। और कोई उपाय नहीं है। नान्य: पंथा विद्यतेऽयनाय। अतः वही करो जो इस रास्ते में आगे बढावें।

ॐ ॐ ॐ

आनन्द-धाम की यात्रा

मनुष्य का जन्म इस धरती पर इसीलिये होता है कि वह अपने मूल स्वरूप को पहचान ले और अपने आत्मिक आनन्द का अनुभव करे। इसी आनन्द की अनुभूति के लिये वह बाहर बहुत दौड़धूप करता है। मगर जिस जिस सहारे को हीरा समझ कर पकड़ता है, वही हाथ में आने पर राख सिद्ध हो जाता है। कहीं बहुत कठिनाई से संयोगवशात् ही कोई ऐसा स्थान उसे मिलता है जो उसके संसारी तनावों से व्यथित-थकित हृदय को शांति और शीतलता का अनुभव करा पाता है।

संत श्री आशाराम आश्रम संसाररूपी मरुस्थल में एक ऐसा ही स्थान है जहाँ संसारी मरुस्थलकी गर्म बालुका में जन्मों–जन्मों से भटकते हुए निराश-हताश जीव को पहुँचते ही उसके हृदय में संत श्री के सान्निध्य में शांति और शीतलता की लहरें उठने लगती हैं। साबरमती नदी के पावन तीर पर मोटेरा गाँव के समीप स्थित यह आश्रम आज मनुष्य मात्र के लिये प्रेम, शांति और आत्मिक–आनन्द की प्राप्ति के लिये आनन्द–धाम बन गया है।

इस पावन आनन्द–धाम की यात्रा और परमानन्द की प्राप्ति के लिये आप सादर आमंत्रित हैं।

–:प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थल:–

श्री योग वेदान्त सेवा समिति, संत श्री आशाराम आश्रम,
मोटेरा गाँव (वाया अडालज) जिला गांधीनगर, गुजरात।

मुद्रक :- रतीलाल अम्बालाल पटेल, अक्षर प्रेस, ११ आशीष इन्ड. एस्टेट, नागरवेल - हनुमान रोड रखियाल, अहमदाबाद ३८००२३.

गौरवपूर्ण गुर्जर भूमि का यह बड़ा सौभाग्य है कि इस पर महान् संत और योगीजनों का अवतरण होता ही रहता है। ऐसे संतों के मुखारविन्द से तत्वज्ञान की ऐसी अमृतधारा प्रवाहित होती है जो अध्यात्मप्रेमी मानव के अन्तस् की अशांत ग्रंथियें को खोलकर आत्मिक-आनन्द से उसका हृदय भर कर उसे धन्य बना देती है।

संत श्री आशारामजी महाराज ऐसे ही एक उच्चकोटि के योगी एवं आत्मज्ञानी श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ संतमहापुरूष हैं। जो भी 'पूज्यश्री' के नजदीक गया उसने कुछ न कुछ पाया ही है। 'पूज्यश्री' के ही अमृत-वचन हैं –

"....संत से पैसे, धन, बंगला, पुत्र आदि मांग लिये और मिल गए तो मत समझना कि हमने बहुत कुछ पा लिया! अरे, असली माल तो अन्दर है। ये तो गुड़ का बारदाना है–टाट है! गुड तो अन्दर है।"

ऐसे संतों के पास जो निर्दोष एवं भावपूर्ण हृदय से खाली पात्र ले जाता है, वह पात्र खाली लिये नहीं लौटता। क्योंकि ऐसे ही संतों के रूप में भगवान विश्व के सम्मुख अपने को प्रकट करता है।

अलौकिक यौगिक तेज एवं प्रेम से परिपूर्ण विशाल नेत्र, प्रेमभरा शीतल हृदय, मधुर आत्मिक व्यवहार से युक्त इन पूज्य संतके अमृतोपम उपदेश एवं मार्गदर्शन से आज मोटेरा आश्रम पर अनेक भक्त एवं साधक अपना जीवन धन्य बना रहे हैं।

मूल्य ३० पैसा

आवरण : दर्शन प्रिन्टर्स, सलापस रोड़, **अहमदाबाद–१.**